Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LI (51), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वैदिक-सृष्टि संरचना एवं स्वरूप

डॉ. नलिनी तिलकर*

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (संस्कृत) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – वेद शब्द का दार्शनिक आशय 'ज्ञान' है। 'विद्' धातु से इसकी व्युत्पत्ति होती है, जिसका तात्पर्य है जानना, अनुभव करना, और सत्य का उद्घाटन करना। प्राचीन ऋषियों ने अपनी दिव्य दृष्टि द्वारा जो ब्रह्मांडीय सत्य अनुभूत किया, वही वेदों में प्रतिपादित है। अत: वेद केवल धार्मिक ग्रंथ न होकर, दार्शनिक, आध्यात्मिक और वैज्ञानिक चिंतन का प्राचीनतम स्रोत हैं।

'सत्येन विद्या ज्ञानेन, वेदि विश्वं विचक्षण:।।1।।'

अर्थात् सत्य और ज्ञान के द्वारा ही इस विश्व की वास्तविकता को जाना जा सकता है। यहाँ स्पष्ट संकेत है कि ब्रह्मांड का मूलाधार केवल आस्था नहीं, बल्कि गहन अनुभूति और ज्ञान है।

'विस्तृणि वि स्तृणि प्राणो, भूयिष्ठं सुषुम्नायोऽविन्दत्।
ततो विश्वानि भूतानि, वेदि विश्वे विचक्षण:।।2।।'

इस सूक्त में प्राण को सृष्टि का मूल कारण माना गया है। प्राण ही वह शक्ति है जिससे सभी भूत और जगत की उत्पत्ति हुई। यह अवधारणा आधुनिक विज्ञान की उस धारणा से मेल खाती है जिसमें ऊर्जा को जगत का आधार कहा गया है।

'प्रजापतिर्यज्ञं तनोति, सूर्याचन्द्रमसाविह।
एवं द्विवेधा वेदा नस्य, यस्मात्सृष्टिर्विभज्यते।।3।।'

यहाँ प्रजापति को सृष्टिकर्ता माना गया है। वह यज्ञरूप सृजन प्रक्रिया के माध्यम से सूर्य और चंद्रमा की व्यवस्था करता है, जिनसे काल और जीवन की लय संचालित होती है। 'यज्ञ' का आशय यहाँ केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि प्रकृति में चल रही सृजन की सतत क्रिया है।

'आशायामासीदात्मन्येषां सूर्य आत्मा जगत: सुषुप्स:।
तं जन्मिनो बृहतो बिभ्रतीति, यतो देवा अजायन्त विश्वे।।4।।'

इस सूक्त में आत्मा को जगत का आधार बताया गया है। आत्मा ही सूर्यरूप में प्रकट होकर जगत को जीवन देती है और उसी से देवताओं तथा सम्पूर्ण ब्रह्मांड का जन्म हुआ।

ऋग्वेद का प्रसिद्ध नासदीय सूक्त सृष्टि के रहस्य पर गहन चिंतन प्रस्तुत करता है-

'नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं, नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्।
किमावरीव: कुह कस्य शर्मन्नम्भ:, किमासीद्गहनं गभीरम्।।5।।'

इस मंत्र में कहा गया है कि सृष्टि के आदि में न सत् था, न असत्, न आकाश था, न पृथ्वी। केवल एक अनिर्वचनीय सत्ता थी। यह कथन सृष्टि के रहस्यमय और अज्ञेय स्वरूप की ओर संकेत करता है।

'तम आसीत्तमसा गूळमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदत्।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम्।।6।।'

यहाँ अंधकार और जल को प्रारंभिक स्थिति बताया गया है। उसी जल में छिपे एक महान तपशक्ति से एक अद्वितीय तत्तव प्रकट हुआ, जो सृष्टि की जड़ बना।

'किं स्विदासीत्क उ नु यत्रासीत्, अर्वाग्देवा अजनयन्नभूत।
विश्वकर्मा विमना: परो यत्को देवस्य हविषा विधेति।।7।।'

इस सूक्त में 'विश्वकर्मा' को महान शिल्पी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ब्रह्मांड की संरचना को एक सुव्यवस्थित योजना माना गया है, जिसमें प्रत्येक तत्तव की भूमिका निश्चित है। यह आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यंत समीप है।

ऋग्वेद का पुरुष सूक्त सृष्टि-दर्शन का अत्यंत गहन निरूपण करता हैकृ

'सहस्रशीर्षा पुरुष: सहस्राक्ष: सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वा, अत्यतिष्ठद्दशाङुलम्।।8।।'

यहाँ पुरुष को विराट ब्रह्मांडीय सत्ता माना गया है, जो सहस्र शीश, सहस्र नेत्र और सहस्र चरण वाला है। सम्पूर्ण जगत उसी का विस्तार है।

'स वै एष पुरुषो यज्ञेन सर्व प्रजापति:।
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्, पुरुषं जातमग्रत:।।9।।'

पुरुष को प्रजापति और यज्ञरूप बताया गया है। उसके अंगों से ही सृष्टि के विविध अंग प्रकट हुए।

'तेन देवा अजनयन्त, साध्या ऋषयश्च ये।
सर्वज्ञं सर्वत: स्थूलं, विश्वरूपं प्रजापतिम्।।10।।'

इस श्लोक में देवताओं और ऋषियों की उत्पत्ति पुरुष से मानी गई है। पुरुष ही सर्वज्ञ, सर्वव्यापी और विश्वरूप प्रजापति है।

'हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्रे, भूतस्य जात: पतिरेका आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां, कस्मै देवाय हविषा विधेम।।11।।'

यहाँ 'हिरण्यगर्भ' को सृष्टि का प्रथम कारण कहा गया है। उसी ने पृथ्वी और आकाश को धारण किया और सम्पूर्ण सृष्टि का नियंता बना।

'यथा ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत तत: समुद्रो अर्णव:।।12।।'

यहाँ स्पष्ट किया गया है कि ऋत (नियम) और सत्य से ही सृष्टि उत्पन्न हुई। उसी से रात्रि, दिवस और समुद्र की उत्पत्ति हुई। यह समय और प्रकृति की मूलभूत संरचना का संकेत है।

'न मृत्युरासीद्मृत्युनो न तर्हि, न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेत:।

आनीदवातं स्वधया तदेकं, तस्माद्धान्यन्न पर: किञ्चनास॥13॥'

इस सूक्त में कहा गया है कि आदि काल में मृत्यु और अमरत्व, दिन और रात्रि, किसी का भी अस्तित्व नहीं था। केवल एक ही सत्ता थी, जो अपनी स्वधामय शक्ति से विद्यमान थी।

इन समस्त वैदिक मंत्रों से स्पष्ट होता है कि भारतीय ऋषियों ने सृष्टि को केवल धार्मिक आख्यान के रूप में नहीं, बल्कि एक दार्शनिक, वैज्ञानिक और आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में देखा। कभी सृष्टि को रहस्यमय और अज्ञेय बताया गया, कभी उसे विराट पुरुष या हिरण्यगर्भ के रूप में मूर्त किया गया और कभी उसे विश्वकर्मा की सुव्यवस्थित रचना कहा गया। यह दृष्टिकोण भारतीय ज्ञान परंपरा की मौलिकता का परिचायक है और आधुनिक ब्रह्मांड-विज्ञान को भी एक प्राचीन बौद्धिक आधार प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथर्ववेद 19.68.1
2. अथर्ववेद 11.4; ऋग्वेद के प्राण-सूक्तों से संबंधित
3. ऋग्वेद 10.90; शुक्ल यजुर्वेद 31
4. ऋग्वेद 10.121; हिरण्यगर्भ सूक्त
5. ऋग्वेद 10.129.1
6. ऋग्वेद 10.129.3
7. ऋग्वेद 10.129.6
8. ऋग्वेद 10.90.1
9. ऋग्वेद 10.90.6-7
10. ऋग्वेद 10.90.8
11. ऋग्वेद 10.121.1
12. ऋग्वेद 10.190.1-2
13. ऋग्वेद 10.129.2

****